Peer Reviewed Refereed Journal ISSN : 2278 – 5639
Global Online Electronic International Interdisciplinary Research Journal (GOEIIRJ)
{Bi-Monthly} Volume – XI Issue – III May – June 2022

# दलित साहित्य

**शोध छात्र**
**श्री. विलास खरात**
***अंबड***

**मार्गदर्शक**
**डॉ. सुभाष दलसिंग जाधव**
***हिंदी विभाग***
***संत रामदास महाविद्यालय, घनसावंगी,***
***जिला जालना, महाराष्ट्र***

वैसे देखा जाये तो बौद्धकाल से भी पहले दलित वर्ग की उपस्थिति अवहेलनात्मक रूप से ही दर्ज की गई थी | किन्तु इसे उत्तेजनात्मकता के साथ, उग्र स्वर में तथा आन्दोलन के रूप में उकेरने की देन केवल और केवल २० वीं सदी को ही जाती हैं | हिंदी साहित्य हो या अन्य किसी भाषा का साहित्य, सभी में निहित दलितों की दुरावस्था का घोर विरोध, इनके लिए भी न्याय संगत मानवीय व्यवहार हो व तथाकथित सभी समाज इन्हें भी मानव ही समझे ऐसी गुहार लगाने वाला साहित्य की चर्चा ही **"दलित विमर्श"** में होती है | अन्य शब्दों में कहे तो---**"दलितों के हितगूंज के लिए और निरंतर होती हुई इनकी दुरावस्था को रोकने के लिए चलाये गए विभिन्न प्रकार के आन्दोलन तथा साहित्यिक क्रांति ही "दलित विमर्श" कहलाता है |"**

*Golbal Oline Electronic International Reserch Journal's* licensed Based on a work at *http://www.goeiirj.com*

दलित विमर्श की संक्षिप्त परिभाषा देखने के बाद हमें यह भी जानना जरूरी है कि दलित साहित्य यानी क्या...? बहुत से विद्वानों का मत हैं कि दलित साहित्य वह साहित्य है जो केवल दलितों द्वारा, दलितों के हितगुंज के लिए लिखा जाता है | जबकि कुछेक विद्वानों का मत यह भी हैं कि जो साहित्यकार दलितों की श्रेणी में नहीं हैं वो भी दलितों के हितगूंज की बाते लिखकर अपना साहित्य सृजित करते पाए गए | तो क्या उनका साहित्य दलित साहित्य नहीं हैं...? इसलिए सारगर्भित रूप से हम कह सकते हैं कि जो साहित्यकार दलितों की वेदना, दुरावस्था और उनके प्रति हो रहे अन्याय को उकेर कर या दलितों की पीड़ा को सृजन का केंद्र बिंदु बना कर शासन व्यवस्था व समाज व्यवस्था को इन सब बातों की जानकारी अपने साहित्य के माध्यम से देते हुए गुहार लगाते हैं कि **"दलित भी एक मानव है..."** वही साहित्य **"दलित साहित्य"** कहलाता हैं |

दलित साहित्य को तीन स्तरों में समझ सकते हैं | पहला भोगे हुए यथार्थ के आधार पर, दूसरा सृजित रचनाओं के आधार पर और तीसरा.. विचारधारा के आधार पर | हालाँकि एक अत्यंत उलझा हुआ किन्तु बुनियादी सवाल यह उभरता है कि—"क्या प्रगतिशील होकर दलित साहित्य लिखा जा सकता है..?" विख्यात दलित साहित्यकार माताप्रसाद का मानना है कि **"दलित साहित्य वह साहित्य हैं जिसमें सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक, शैक्षिक और राजनितिक दृष्टी से दलितों की सुवर्ण समाज द्वारा की गई हर तरह से उपेक्षा का वर्णन होना आवश्यक हैं | साथ ही दलित साहित्य में बंधनों में जकड़ी स्त्रियाँ, बंधुआ मजदूर, दास, घुमंतू जातियां अनुसूचित जाति व जनजाति की पीड़ा और वेदना का दर्ज होना भी**

**आवश्यक है | कह सकते हैं कि दलित साहित्य वेदना, चीख और छटपटाहट का साहित्य है |"(१)** हम कह सकते हैं कि— **"दलित साहित्य उस साहित्य को कहते हैं जिसमें दलितों ने स्वयं अपनी पीड़ा को रुपायित किया हो, उन्होंने अपने जीवन संघर्ष में जिस कडवे सत्य को भोगा है उसी की अभिव्यक्ति इसमें होती है |"(२)**

ओमप्रकाश वाल्मीकि का मानना है कि केवल दलित साहित्यकार ही सटीक तरीके से दलित साहित्य लिख सकता हैं, क्योंकि उस साहित्य में लेखक की खुद की अनुभूतियों की विरासत जो व्याप्त होती हैं | 'सलाम' एक ऐसी ही कहानी है जो अनुभूतियों के दस्तावेज की प्रामाणिकता प्रस्तुत करती हैं | यह कहानी न केवल दलित जीवन की मार्मिक अभिव्यक्ति करती हैं बल्कि सवर्णों की कुत्सित मानसिकता का कच्चा चिट्ठा भी खोलती है | इस कहानी में सदियों से चली आ रही परम्परा ( जिसमें दलितों का हर तरह से जी भरकर अपमान ही अपमान किया जाता है ) का विरोध एक पढ़ा-लिखा किन्तु **"दलित"** लड़का करता है | अगर जाति से दलित है फिर चाहे वो कितना भी सुशिक्षित हो तो भी उसे परम्परा तोड़ने का कोई अधिकार नहीं रहता है | परंपरा यह है कि—किसी भी युवक की शादी होने के बाद रोज सबेरे पूरे गाँव में सभी उच्च वर्ग के लोगों को 'सलाम' बोलना पड़ता है, जिससे उसे हर घर से कुछ न कुछ मिले | शहर का पढ़ा-लिखा लड़का इस अपमानित परम्परा का विरोध करता है, और वह सलाम नहीं बोलता है | तब उसे कई तरह से प्रताड़ित करने का प्रयास किया जाता है | ओमप्रकाश वाल्मीकि इस कहानी में वर्चस्व की सत्ता को न केवल ठुकराते हैं बल्कि चुनौती भी देते हैं | सदियों से दमित अस्मिता और पीड़ित जन समुदाय को एक दिशा देने का प्रयास करते हैं | दलित कहानियां न केवल दलित जीवन को अभिव्यक्त करती हैं बल्कि अपने आसपास के समाज का हुबहू चित्रण भी करती हैं | ओमप्रकाश वाल्मीकि न केवल दलित साहित्यकार हैं बल्कि आलोचक और चिन्तक भी हैं | **"दलित साहित्य का सौंदर्य शास्त्र"** इनकी बहुचर्चित पुस्तक है, जिसमें वें दलित साहित्य की अंतर्यात्रा को बखूबी समझाते हैं |

दलित साहित्य का आरम्भ १९८० के बाद आत्मकथा लेखन से हुआ | प्रसिद्द दलित साहित्यकार ओमप्रकाश वाल्मीकि की चर्चित आत्मकथा **'जूठन'** को जब राजेंद्र यादव ने 'हंस' पत्रिका में कई अंशों में प्रकाशित किया, और इस आत्मकथा ने सम्पूर्ण भारतीय साहित्य में अपना एक अहम् स्थान बनाया | तदन्तर क्रमशः और भी कई दलित साहित्यकार उभर कर सम्मुख आए—जैसे—सुशीला टाकभोरे, मोहनदास नेमिशारण्य, जयप्रकाश कर्दम, श्यौराज सिंह बेचैन, रत्नकुमार साम्भरिया, कालीचरण सनेही, और रूपनारायण सोनकर इत्यादि | वैसे सही मायने में दलित साहित्य की शुरुआत तो मराठी साहित्य से ही मानी जाती है | जब हिंदी साहित्य में दलित साहित्य ने अपनी चहलकदमी की तब इस साहित्य के पैर नन्हें नहीं थे बल्कि अपना संतुलन बनाये रखने वाले कदम थे | क्योंकि इसने अपना बचपन तो मराठी साहित्य में ही गुजर दिया था | रूपनारायण सोनकर एक ऐसे दलित साहित्यकार हैं जिनकी रचनाएं प्रेमचंद की रचनाओं से मुठभेड़ करने की कोशिश करती हैं | 'गोदान' की तर्ज़ पर लिखा गया इनका उपन्यास 'सुअरदान' दलित साहित्य में अत्यधिक चर्चित रहा है | प्रेमचंद की तरह ही सोनकर ने अपनी कहानी का नाम 'सद्गति' ही रखा और इसमें साम्प्रदायिकता बढाने वाले कुपात्रों का जिक्र किया | सोनकर की यह कहानी न केवल दलित समाज वरन सम्पूर्ण समाज में धार्मिक आस्था को ठेस पहुँचाने तथा उसके नाकाम होने पर लोगों के हृदय में नफ़रत भरने वाले लोगों की पोल खोलती है |

दलित कहानीकारों की एक और भी विशेषता हैं कि वे न केवल समस्या उठाते हैं बल्कि उस समस्या का समाधान भी प्रस्तुत करते हैं | इसी कहानी का एक पात्र शब्बीर जो किन्हीं कारणों से समाज में धर्म के नाम पर उन्माद फैलाता है और जब उसे अपनी गलती का एहसास होता है तो माफ़ी मंगाते हुए कहता है—**"मैनें गुनाह किये हैं | मैं मानवता को भूल गया था | स्वार्थ व अंधे धर्म-मज़हब ने मुझे बिलकुल ही अंधा कर दिया था | हम सभी यहाँ भाई-भाई हैं | मैनें अपने भाईयों को मारकर बहुत ही बड़ा अपराध किया है, मुझे इसकी सजा मिलनी ही चाहिए |"(३)** दलित कहानीकार समाज में फैली अराजकता और ढेरों विसंगतियों को ख़त्म करने का मार्ग भी सुझाते हैं | बाबा साहेब आम्बेडकर के विचार सम्पूर्ण दलित साहित्य का आधार और प्राण तत्व हैं | आम्बेडकर जीवन भर यही प्रयत्न करते रहे कि जाति व्यवस्था समूल नष्ट होजाए | दलित साहित्यकार ये चाहते हैं कि समाज में धर्म, पैसा, सत्ता और जन्म के आधार पर किसी भी व्यक्ति की श्रेष्ठता घोषित ना की जाए और मानव से मानव का भेदभाव ना किया जाये क्योंकि दलित भी तो एक मानव ही है | सम्पूर्ण रूप से देखे तो यह साहित्य जाति मुक्ति का साहित्य है | **"सचमुच जाति एक ऐसा राक्षस है जो आपका रास्ता काटेगा | जब तक आप इस राक्षस को नहीं मार देते तब तक आप ना तो कोई राजनितिक सुधार कर सकते हैं और ना ही आर्थिक |"(४)**

दलित कहानियां दलित जीवन में जबरन भर दिए गए अपमान और तिरस्कार के विरोध में अपनी आवाज़ बुलंद करती हैं साथ ही दलित समाज की अपनी विसंगतियों को भी अभिव्यक्त करती हैं | दलित साहित्यकारों ने अपने समाज में फैले आडम्बर और सामंतवादी मानसिकता को भी दूर करने का आव्हान करते हैं—**"दलित समाज को अपनी मुक्ति के लिए सवर्णों से ही नहीं अपितु स्वयम से भी संघर्ष करना होगा यह बहुत पीड़ादायक और मुक्ति की राह में बड़ी रुकावट है|" (५)** आम्बेडकर हमेशा यही कहते थे—'शिक्षित बनो', 'संगठित हो' और 'संघर्ष करो' | साथ ही वे यह भी कहते थे 'अप्पो दीपो भव' यानी कि अपना दीपक स्वयं बनो | उनका यह भी मानना था कि—**"प्रत्येक व्यक्ति को शिक्षित होना ही चाहिए | हर एक व्यक्ति में अपनी रक्षा की क्षमता होनी ही चाहिए, अपने अस्तित्व को बनाये रखने के लिए प्रत्येक व्यक्ति के लिए यह बहुत जरूरी भी है "(६)** दलित समाज अभी तक तो यही मानकर चलता था कि शिक्षा उनके लिए हैं ही नहीं | पर जब उन्हें दलित साहित्य के माध्यम से अपने अधिकारों का पता चला तो वे शिक्षा को अपने विकास का बुनियादी आधार समझने लगे | उन्होंने अपने प्रति होने वाले अपमान व अन्याय के खिलाफ आवाजें उठानी शुरू कर दी—**"आप लोग हमारे मुहल्ले के लड़कों को इस तरह डॉम कहकर अलग-अलग नहीं बैठा सकते हैं "(७)**

लेकिन सदियों से उन पर अत्याचार करने वाला यह तथाकथित सभ्य समाज कब समझ पाया..? उसकी सोच कब बदली..? जो आज बदलेगी...| इस समाज ने हमेशा से इन दलितों के साथ यही व्यवहार किया जो सदियों से करता आया हैं | जब दलित समाज अपना अधिकार मांगता है तो उसे गालियाँ ही सुनानी पड़ती है—**"क्यों रे..क्यों दौड़ गया था रे..हरामी का पिल्ला डॉन चार हाथ कास के पड़ेंगे तो जानेगा साला कि डॉम लोगों को अलग-अलग क्यों बिठाया जाता है|"(८)** जयप्रकाश कर्दम का नाम भी दलित साहित्य के आकाश में चमकते सितारे की तरह है | इन्होनें दलित जीवन के समाजशास्त्र को बेहतर ढंग से समझाने का प्रयास किया है | इनकी एक सुप्रसिद्ध कहानी 'नोबार' है जिसमें एक नौकरी पेशा दलित युवक के जीवन की दर्दनाक घटना है | युवक अपनी शादी के लिए अखबार में एक विज्ञापन देखता है—जिसमें स्पष्ट लिखा होता है कि जाति का कोई बंधन नहीं है | युवक उस विज्ञापन को पसंद करके दिए हुए पत्ते पर संपर्क करता

है, जहाँ उसे आमंत्रित भी किया जाता है | युवक वहां जाकर अपने कुशल व्यवहार और मृदु भाषा से उन लोगों का मन जितने में भी सफल होजाता है | लेकिन जैसे ही लड़की के पिता को पता चलता है कि लड़का दलित समाज का है वैसे ही तुरंत लड़की का पिता भड़क उठता है और उस लड़के को जाने के लिए कह देता है | तब लड़की पिता को समझाते हुए कहती है—"क्यों पापा, जब हम जाति-पांति को मानते ही नहीं तो...पिता और अधिक गुस्से में आकर कहता है—**"नोबार" का मतलब यह तो नहीं कि किसी चमार-चुहड़ के साथ...|" (९)** यह कहानी उच्च वर्ग और तथाकथित सभ्य समाज के कुत्सित व घिनौनें विचारों को प्रदर्शित करती हैं जो ऊपर से भले ही प्रगतिशील होने का नाटक करते हैं मगर अन्दर से तो अभी भी जाहिल, कुत्सित, नीच सोच रखने वाले और जातिवादी ही हैं |

यह दलित साहित्य की सीमा कह ले या फिर चुनौती...दलित महिलायें आज भी कहानी या उपन्यास विधा में लेखन कार्य बड़े स्तर पर नहीं कर पा रही हैं | दलित महिलायें आज भी पितृसत्ता, जातिवाद, अशिक्षा व गरीबी में अपना जीवन निकाल दे रही है | समाज में एक घृणा का भाव अभी भी बना हुआ है—**"दलित स्त्री की निम्न स्थिति व आधीनता को गुलामी का पर्याय बनाने में पुरुष सत्ता ने मानवता को शर्मसार किया है | लेकिन विडम्बना यह है कि देश की आज़ादी भी दलित स्त्री को स्वाधीनता लौटाने में समर्थ नहीं हो पायी है |"(१०)**

**और अंत में---**

भारत में दलित साहित्य की गूंज वैसे तो छठे दशक से ही सुनाई दे रही थी | किन्तु दलित स्वर को अपनी वाणी से समस्त समाज को परिचालित करने में कुछ समय लगा | आज़ादी के पश्चात् लोकतंत्र की स्थापन हुई | जिसमें धर्म, जाति, लिंग, और आर्थिक स्थिति के आधार पर असमान समाज बनने लगा | ऐसे में डॉ. बाबा साहेब आम्बेडकर मसीहा बनकर आये और जातिभेद को बहुतांश रूप से कम करने के प्रयत्न करने लगे | दलितों के विकास के लिए अनेकानेक प्रीतम करने लगे | सामाजिक रूप से सम्पूर्ण दलित समाज को इन्होने एक साथ उद्वेलित किया | इन्होने नारा दिया—शिक्षित बनो, संघर्ष करो और संगठित रहो | इस बोध वाक्य को सम्पूर्ण दलित समाज ने अपने जीवन का मूलमंत्र बना लिया | हम कह सकते हैं की सम्पूर्ण दलित साहित्य की वैचारिक ऊर्जा बाबा साहेब आम्बेडकर के उर्जावान विचार ही हैं |

**सन्दर्भ सूची**

(१)---कथा क्रम, दलित विशेषांक, नवम्बर २०००, पृष्ठ संख्या—११५
(२)--दलित साहित्य की भूमिका—कंवल भारती—पृष्ठ संख्या—६७
(३)--रूपनारायण सोनकर—'सद्गति' कहानी से—
(४)---डॉ. बी. आर. आम्बेडकर—अनुवादक—आचार्य जुगलकिशोर बौद्ध, 'जाति भेद का बीजनाश' पृष्ठ संख्या- ३१
(५) —दिलीप काठेरिया, दरारें, दलित अस्मिता—जनवरी—मार्च—२०१५ पृष्ठ संख्या—५९
(६)—डॉ.बी.आर. आम्बेडकर, आचार्य जुगलकिशोर बौद्ध, (अनुवादक) जातिभेद का बीजनाश, सम्यक प्रकाशन, नई दिल्ली, पृष्ठ संख्या—३५
(७)—डॉ, संजय बाग, हीरो (कहानी) दलित अस्मिता पत्रिका, अप्रैल-जून २०१३, पृष्ठ संख्या—४
(८)—डॉ. संजय बाग—हीरो (कहानी) दलित अस्मिता पत्रिका, अप्रैल-जून २०१३ पृष्ठ संख्या ४

(९)—जयप्रकाश कर्दम—नोबार—कहानी से—

(१०)—सम्पादकीय—जातिप्रथा के अभिशाप से ट्रस्ट विश्व का महँ जनतंत्र, दलित अस्मिता—अप्रैल-जून—२०१३ पृष्ठ संख्या—९